THE STUDY
An Institute for IAS

प्राचीन भारत का इतिहास भाग-2

मणिकांत सिंह

पाठ्य सूची

अध्याय - 1.	प्राचीन भारत का इतिहास लेखन	1-7
अध्याय - 2.	प्राचीन भारत के इतिहास के अध्ययन के स्रोत	8-29
अध्याय - 3.	आद्य ऐतिहासिक काल	30-42
अध्याय - 4.	हड़प्पा सभ्यता	43-85
अध्याय - 5.	वैदिक काल	86-109
अध्याय - 6.	महाजनपद काल	110-145
अध्याय - 7.	मौर्य काल	146-192

NOTES

अध्याय 1 प्राचीन भारत का इतिहास-लेखन

प्राचीन भारतीय इतिहास का आधुनिक लेखन और प्राचीन भारतीय संस्कृति का अध्ययन अठारहवीं शताब्दी से शुरू हुआ। जब भारत में कम्पनी का शासन कायम हुआ तो ब्रिटिश शासन को स्थायित्व प्रदान करने के लिए शासितों की परम्परा, रीतिरिवाज, विधि-व्यवस्था आदि का ज्ञान आवश्यक प्रतीत हुआ और इसी क्रम में भारतीय इतिहास का अन्वेषण प्रारम्भ हुआ। 1784 ई. में कलकत्ता में **'एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल'** की स्थापना हुई। तत्पश्चात् 1804 ई. में बम्बई में **'एशियाटिक सोसाइटी'** एवं 1823 में लंदन में **'एशियाटिक सोसाइटी ऑफ ग्रेट ब्रिटेन'** की स्थापना हुई। भारतीय संस्कृति के अन्वेषण करने वाले ब्रिटिश बुद्धिजीवियों तथा अधिकारियों को प्राच्यवादी कहा गया। अठारहवीं शताब्दी से बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भिक काल तक भारतीय इतिहास के सन्दर्भ में चिन्तन की तीन प्रवृत्तियाँ देखने में आती हैं। इन्हें **प्राच्यविदों, उपयोगितावादियों** और **राष्ट्रवादियों** की विचारधारा कहा जा सकता है।

प्रारम्भ में **प्राच्यविदों (orientalists) या भारतविदों (Indologists)** ने भारतीय इतिहास की व्याख्या प्रस्तुत की। उनमें से जिन लोगों ने संस्कृत का अध्ययन किया, वे आर्य भाषाभाषी जनगण की संस्कृति के उत्साही प्रतिपादक बन गए। उन लोगों ने भारतीय-यूरोपीय मूलस्थान तथा संस्कृत और यूनानी संस्कृतियों की समान पूर्वज परंपरा का सिद्धान्त विकसित किया। वैदिक युग को बढ़ा-चढ़ाकर आँका गया और प्राच्यविदों ने प्राचीन भारतीयों को खुशहाल ग्राम्य समाज के लोगों के रुप में देखा। तनाव भरी बातों को नजरअन्दाज कर दिया गया और गौरव के पक्ष पर जोर दिया गया। प्रारम्भिक भारतविदों में **विलियम जोंस** की विशिष्ट भूमिका रही। किन्तु प्रारम्भिक भारतविदों में सबसे प्रसिद्ध **मैक्समूलर** था। मैक्समूलर ने अपरिवर्तनशील भारतीय ग्रामीण समुदाय के बारे में लिखा। उसने भारत को दार्शनिकों का देश करार दिया। उसके विचार में भारतीय आध्यात्मिक या पारलौकिक समस्याओं में ही डूबे रहे और वे ऐहलौकिक समस्याओं की चिन्ता नहीं करते थे। **मैक्समूलर ने कहा था- 'यूनानियों के लिए जीवन उमंग और वास्तविकता से परिपूर्ण है, हिन्दुओं के लिए वह स्वप्न और माया है।'** वस्तुतः इन तथाकथित प्राच्यवादियों द्वारा भारत के महिमा-मंडन के पीछे उनके अपने हित भी छिपे हुए थे। इन प्रेरक हितों में सबसे प्रमुख हित यह है कि बहुत-से प्राच्यविद ऐसे लोग थे जो खुद अपने समाज से बेगाने पड़ गए थे और खासतौर पर औद्योगीकरण के फलस्वरुप यूरोप में जो ऐतिहासिक परिवर्त्तन हो रहे थे, उनके बारे में उनके मन में संशय की गहरी भावना भरी थी। इसलिए वे आदर्शलोक की कहीं और तलाश करते थे और उनमें से अनेक यह समझते थे कि ऐसे आदर्शलोक प्राच्य जगत की प्राचीन संस्कृतियों में मौजूद है। प्राच्यविदों ने भारत की प्राचीन संस्कृति का जो समर्थन किया था, उसका एक दूसरा कारण यह था कि उपयोगितावादियों के साथ संघर्ष में वे मात खा रहे थे।

उन्नीसवीं शताब्दी में ब्रिटिश दार्शनिकों के एक दूसरे समूह का उद्भव हुआ। इन दार्शनिकों में **'जेम्स मिल'** और **'बेंथम'** प्रमुख थे। विचारकों के इस समूह को **उपयोगितावादी विचारकों** के नाम से जाना जाता है। उपयोगितावादी विचारक प्राच्यवादियों के तीखे आलोचक के रुप में उभरे क्योंकि उनके विचार में प्राच्यवादियों में भारतीयता के लिए एक प्रकार का सनकीपन (Indomania) देखा जा सकता था। बदले में, उपयोगितावादियों ने भारतीय पद्धति को निकृष्ट करार दिया। उनका यह पक्का विश्वास था कि भारत में अंग्रेजों का आगमन एक दैवीय सुयोग है क्योंकि ब्रिटिश प्रशासन और कानून से भारत का पिछड़ापन

खत्म हो जाएगा। उससे अब तक के निरंकुश शासकों का अटूट सिलसिला समाप्त हो जाएगा और भारत के जनगण में नई चेतना का संचार होगा। इस तरह उपयोगितावादियों के विपरीत प्राच्यवादियों ने भारतीय दुभृति (Indophobia) जैसी चेतना को प्रोत्साहित किया। भारतीय ऐतिहासिक चिन्तन को प्रभावित करने की दृष्टि से उपयोगितावादियों में सबसे विशिष्ट नाम जेम्स मिल का है। मिल के **'ब्रिटिश भारत का इतिहास'** (History of British India) का सबसे महत्वपूर्ण पहलू शायद यह था कि एक दृष्टि से उसने भारतीय इतिहास की सांप्रदायिक व्याख्या की नींव डाली और इस तरह द्विराष्ट्र के सिद्धान्त के लिए ऐतिहासिक औचित्य प्रस्तुत किया। वह पहला इतिहासकार था जिसने भारतीय इतिहास को तीन कालों में विभाजित किया और इन तीन कालों का उसने नाम दिया– हिन्दू काल, मुस्लिम काल एवं ब्रिटिश काल। किन्तु मिल द्वारा प्रदत्त इस नामकरण में अव्याप्ति एवं अतिव्याप्ति दोनों प्रकार का दोष देखा जा सकता है। प्रथम, अकेले राजवंशीय इतिहास के आधार पर भी प्राचीन काल को हिन्दू काल कहना उचित नहीं है। कारण यह है कि ऐसे कितने ही बड़े राजवंश, यथा मौर्य, इन्डो-यूनानी, शक और कुषाण थे, जिन्हें इस परिभाषा में बैठाया नहीं जा सकता। इन राजवंशों में अनेक राजा बौद्ध थे। दूसरे, 'हिन्दू शब्द' का प्रयोग भारत संबंधी इस्लाम-पूर्व स्रोतों में नहीं पाया जाता। पहले अरबों ने और बाद में औरों ने हिन्द देश में रहनेवाले लोगों के लिए इसका प्रयोग किया। तीसरे, इस काल विभाजन को स्वीकार करने में बुनियादी सवाल यह उठता है कि भारतीय उपमहाद्वीप के अलग-अलग प्रदेशों में मुस्लिम राजवंशों का आगमन अलग-अलग समय पर हुआ। अत: अगर मिल का काल-विभाजन राजवंशों पर भी आधारित है तो भी उचित नहीं है। इस तरह हम देखते हैं ब्रिटिश विचारकों का भारतीय इतिहास लेखन के क्रम में एक महत्ती उद्देश्य था और वह उद्देश्य था भारत में ब्रिटिश राज एवं उसके द्वारा भारतीय स्रोतों के शोषण का ऐतिहासिक औचित्य सिद्ध करना। इसके बावजूद साम्राज्यवादी इतिहास-लेखन का यह महत्व रहा कि इसके द्वारा भारतीय इतिहास के सुव्यवस्थित लेखन की शुरुआत की गई।

प्राचीन भारतीय इतिहास के संबंध में ब्रिटिश विचारधारा को अनिवार्यत: उन भारतीय विद्वानों की चुनौती का सामना करना पड़ा, जो जाने अनजाने भारत के सुधारवादी नेताओं के साथ-ही-साथ प्रबल राष्ट्रीय भावना तथा राजनीतिक जागरण से प्रभावित थे। **'रामकृष्ण परमहंस'** ने इस बात पर जोर दिया कि हिन्दू धर्म ने सभी धर्मों को अपने में समाविष्ट कर लिया है। उनके शिष्य **विवेकानन्द** और बाद में **एनीबेसेंट** ने हिन्दू धर्म का वर्चस्व सिद्ध करने का प्रयास किया। **बंकिमचन्द्र** ने बतलाया कि राष्ट्र के रुप में भारत के उत्थान के लिए हिन्दुत्व का पुनरुद्धार बहुत आवश्यक है। तत्पश्चात् बीसवीं शताब्दी के शुरु के इतिहासकार लाजिमी तौर से राष्ट्रीय आन्दोलन से प्रभावित थे। वे ज्यादातर प्राच्यविदों की रचनाओं का ही सहारा लेते थे और उन दिनों फिर से प्राचीन भारत का, जिसे तब प्राय: हिन्दू भारत पुकारा जाता था, काफी बढ़ चढ़ कर गौरव गान होने लगा था। जहाँ राष्ट्रवाद के साथ उपनिवेशवाद तथा एक साम्राज्यवाद-विरोधी स्थिति भी जुड़ी हो, वहाँ अतीत का गौरव-मंडन वर्तमान की अपमान जनक स्थिति में एक प्रकार की सांत्वना का भी काम करता है। इसलिए जो भी अतीत के प्रति आलोचनात्मक दृष्टिकोण अपनाने का प्रयास करता उसे करीब-करीब ऐसी नजर से देखा जाता जैसे वह राष्ट्रवादी ध्येय पर हमला कर रहा हो। गौरव-मंडन के आरंभिक काल में राष्ट्रवादी चेतना भारतीय समाज में विरोधों एवं तनावों के अस्तित्व को स्वीकार करने के प्रति एक प्रकार के झिझक का रुप ले लिया। धर्मशास्त्रों जैसी सैद्धान्तिक रचनाओं को भारतीय जीवन की वास्तविकता के विवरण के रुप में स्वीकार कर लिया गया और इसलिए प्राचीन भारतीय जीवन को निर्बन्ध खुशहाली का जीवन मान लिया गया। विदेशी

प्रभुत्व से स्वतंत्रता, जनवादी संस्थाओं, राजनीतिक प्रतिनिधित्व आदि जैसे मूल्यों की, जो राष्ट्रीय आन्दोलन के लिए आवश्यक थे, खोज की जाती थी और पहले ही यह मान लिया जाता था कि प्राचीन काल में उनका अस्तित्व मौजूद था। हालाँकि उस काल में कुछ ऐसे भी विद्वान हैं जिनकी दृष्टि वस्तुनिष्ठ एवं तर्कसंगत है। उदाहरण के लिए, **राजेन्द्र लाल मित्र, रामकृष्ण गोपाल भंडारकर, विश्वनाथ काशीनाथ राजवाड़े** आदि। **आर.डी. भंडारकर** ने सातवाहनों के दक्कन के इतिहास का और वैष्णव एवं अन्य संप्रदायों के इतिहास का पुनर्निर्माण किया। उन्होंने अपने शोधों से विधवा-विवाह जैसी कुप्रथा का खंडन किया। इस प्रकार, राष्ट्रवादी इतिहास-लेखन का भी अपना योगदान रहा। भारतीय विद्वानों ने राजव्यवस्था और राजनीतिक इतिहास का गंभीर अध्ययन करके यह सिद्ध किया कि भारत का राजनीतिक इतिहास है और प्राचीन भारत के लोग भी उत्कृष्ट प्रशासनिक संरचना से परिचित थे। 1923 ई. में प्रकाशित अपनी पुस्तक **'ए हिस्ट्री ऑफ हिन्दू पॉलिटिकल थ्यूरीज'** में **यू.एन. घोषाल** ने बड़े कुशल ढंग से मैक्समूलर और ब्रूमफील्ड के इस मत का खण्डन किया कि अपनी कुछ चरित्रगत प्रवृत्तियों के कारण हिन्दू लोग राज्य जैसी किसी चीज की परिकल्पना नहीं कर सके और उनकी योजना में राज्य के हित की कोई व्यवस्था नहीं है। **के.पी. जायसवाल और एस.एस. अल्तेकर** जैसे कुछ विद्वानों ने देश को शकों और कुषाणों से मुक्त कराने में भारतीय राजवंशों की भूमिका बढ़ा-चढ़ाकर दिखाई है। फिर भी **के.पी. जायसवाल** का सबसे बड़ा श्रेय है कि भारतीय तानाशाही की कपोल कल्पना को उन्होंने ध्वस्त कर दिया। इसके बावजूद राष्ट्रवादी इतिहासकारों की सबसे बड़ी कमजोरी यह रही कि उन्होंने मिल के काल-विभाजन को चुनौती नहीं दी। एक हद तक इसका कारण यह था कि राजनीतिक और राजवंशीय इतिहास का अध्ययन तो जारी रहा, लेकिन सामाजिक और आर्थिक इतिहास के अध्ययन को करीब-करीब त्याग दिया गया।

अत: साम्राज्यवादी इतिहास-लेखन को वास्तविक चुनौती **मार्क्सवादी चिंतकों** के द्वारा मिली। **डी.डी. कोसाम्बी** ने अपनी पुस्तक **'एन इन्ट्रोडक्शन टू द स्टडी ऑफ इण्डियन हिस्ट्री'** में इस दिशा में पहल की। यह पुस्तक राजनीतिक इतिहास से अराजनीतिक इतिहास की दिशा में एक भारी मोड़ है। वे अपना विवेचन इतिहास की उस भौतिकवादी व्याख्या के संदर्भ में करते हैं जो मार्क्स द्वारा अवधारित है। वे प्राचीन भारतीय समाज, अर्थतंत्र और संस्कृति के इतिहास को उत्पादन की शक्तियों और संबंधों के विकास के अभिन्न अंग के रुप में देखते हैं। वस्तुत: मार्क्स ने इतिहास को मात्र अलग-अलग घटनाओं या महान व्यक्तित्वों के क्रियाकलापों की सूची के रुप में न देखकर समाज के आंतरिक संगठन तथा बदलाव को अनावृत करने के उद्देश्य से देखा एवं अध्ययन किया। **कार्ल मार्क्स** की महत्वपूर्ण सूक्ति है **"दार्शनिकों ने अब तक समाज की व्याख्याएँ की हैं, परन्तु असली प्रश्न समाज को बदलने का है।"** विश्लेषण की इस परंपरा में ही उसने अपने समय की प्रभावशाली वैचारिक प्रवृत्तियों 'आदर्शवाद' तथा 'उदारवाद' का विरोध किया एवं यह प्रमाणित करने की कोशिश की कि किसी भी समाज के इतिहास को समझने के लिए उस समाज की उत्पादन पद्धति (Mode of production) को जानना जरुरी है। इस तरह समाज के विकास में बौद्धिक शक्तियों की तुलना में भौतिक शक्तियों की भूमिका पर अधिक बल दिया गया। अत: मार्क्सवादियों के अनुसार विचारधारा उस ढाँचे का हिस्सा है जो उत्पादन प्रणाली के उपरी आधार पर खड़ा किया जाता है। मार्क्सवादियों के बीच आधार और ढाँचे की परिकल्पना इमारत बनाने की प्रक्रिया से ली गई है। किन्तु मार्क्सवादी अध्ययन में इसका विशेष महत्व हो गया है। इस मार्क्सवादी दृष्टि में 'आधार' (Base) का अर्थ एक प्रकार से उत्पादन प्रणाली होता है। इस प्रणाली में केवल तकनीकी शक्तियाँ ही नहीं आती है बल्कि

NOTES

जमीन, चारागाह, फैक्ट्री जैसे सारे साधन भी आते हैं। साथ-ही-साथ उत्पादन प्रणाली में श्रमशक्ति का भी स्थान होता है। श्रम-शक्ति उपलब्ध हो, इसके लिए आवश्यक है कि लोग बराबर पैदा होते रहें। अत: विवाह की संस्था का भी इसमें कुछ स्थान होता है। इन चीजों को मिलाकर सामाजिक आधार पर ढाँचा बनाने का अर्थ होता है कि उत्पादन प्रणाली को कायम रखने के लिए या समयानुसार उसमें जहाँ-तहाँ परिवर्तन करने के लिए सामाजिक तथा राजनीतिक प्रबंध किए जाएँ। ये प्रबंध ढाँचे अथवा सुपर स्ट्रक्चर के अंतर्गत आते हैं। उसी तरह से कलात्मक, साहित्यिक, अनुष्ठान-संबंधी, दार्शनिक और अन्य क्रियाकलाप अंतत: आधार (Base) के फल माने जाते हैं। इस तरह मार्क्सवादी चिंतक आधार और ढाँचे के परस्पर संबंधों के आधार पर इतिहास की व्याख्या प्रस्तुत करते हैं। परन्तु जैसाकि मार्क्सवादी परंपरा के अंतर्गत ही लिखने वाले इतिहासकार **आर.एस. शर्मा** का मानना है कि इतिहास की सारी गुत्थियाँ इस सिद्धान्त को अपनाने से नहीं सुलझ सकती है। उदाहरणार्थ, भाषा के विकास की व्याख्या हम भौतिकवादी परिवेश में कर सकते हैं, किन्तु भाषा का उदय कैसे हुआ है, यह गुत्थी नहीं सुलझ सकती है। इन्हें अंग्रेजी में एक्सट्रा सुपरस्ट्रक्चरल समस्याओं (Extra-super structural problems) की संज्ञा दी गई है। लेकिन इन सीमाओं के बावजूद आधार-ढाँचे का सिद्धान्त आज भी लाभदायक है और इससे इतिहास की प्रमुख धाराओं का समझने में सुगमता रहती है। निस्संदेह आधार का अध्ययन ढाँचे के अध्ययन से अधिक महत्व का है और विश्लेषण करने तथा सह-संबंध स्थापित करने के लिए ही दोनों को एक-दूसरे से अलग करके देखना लाभकारी होता है।

इस तरह मार्क्सवादी दृष्टिकोण ने इतिहास-लेखन को एक नयी दिशा दी। परिणामत: राजवंशीय इतिहास का महत्व कम होता गया। मार्क्सवादी लेखक सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक प्रक्रियाओं पर अधिक जोर देते हैं और उनका संबंध राजनीतिक गतिविधियों से जोड़ने का प्रयास करते हैं। वे मूलग्रंथों के स्तरण (Stratification) को देखते हैं और उनके पारम्परिक स्वरुप को नृवैज्ञानिक साक्ष्यों से मिलाते हैं। साहित्यिक और पुरातात्विक साक्ष्यों को बढ़ाने और समझने के लिए नृतत्वशास्त्र के कुछ संबद्ध निष्कर्षों का सहारा लिया गया और साथ ही साथ जलवायु और पर्यावरण संबंधी कारकों को भी महत्व दिया गया। इस सारी प्रगति के फलस्वरुप साहित्यिक स्रोतों के विश्लेषणात्मक अध्ययन में काफी अभिवृद्धि हुई और इससे प्राचीन अतीत पर नया प्रकाश पड़ने लगा।

अत: प्राचीन भारत के इतिहास के अध्ययन में बहुत-सारी परंपरागत मान्यताएँ ध्वस्त हो गईं। मगध साम्राज्यवाद के उद्भव के पीछे कतिपय शासकों के व्यक्तिगत पराक्रम के बदले सुस्पष्ट भौतिक कारकों को तलाशा गया। उसी तरह ईसा पूर्व छठी शताब्दी में विरोधी धार्मिक पंथों के उद्भव को उत्पादन अधिशेष की स्थिति से जोड़ कर देखा जाने लगा। अशोक की 'धम्म नीति' को उसके उदार दृष्टिकोण का प्रतिफलन न मानकर राज्य मशीनरी के सामाजिक दर्शन के रुप में मूल्यांकन किया जाने लगा। गुप्तकाल के संबंध में स्वर्णयुग एवं हिन्दु पुनर्जागरण जैसे मिथक को कपोल-कल्पित करार दिया गया।

इन सबों का समन्वित परिणाम यह हुआ कि मिल के काल-विभाजन से संबंधित आधारभूत मान्यता खंडित हो गई। इसके साथ नई मान्यता यह आई कि इस्लाम के आगमन के साथ नहीं, बल्कि छठी शताब्दी में गुप्त-साम्राज्य के पतन के साथ मध्यकाल का उद्भव हुआ। इस मध्ययुग की अपनी कुछ विशेषताएँ थीं जो निम्नलिखित हैं-राजनीतिक क्षेत्र में सामंतवाद, आर्थिक क्षेत्र में वाणिज्य-व्यापार का पतन, मुद्रा अर्थ- व्यवस्था का पतन एवं स्वाबलम्बी ग्रामीण अर्थव्यवस्था का विकास, सामाजिक क्षेत्र में उपजातियों का विकास,

NOTES

ब्राह्मणवादी वचर्स्व में वृद्धि एवं वैश्यों की स्थिति में गिरावट तथा उनका शूद्रों का समकक्ष हो जाना, धर्म के क्षेत्र में तंत्रवाद एवं भक्ति का उद्भव, दर्शन के क्षेत्र में पारलौकिक दृष्टिकोण पर बल (शंकर का मायावाद), भाषायी क्षेत्र में क्षेत्रीय भाषाओं का उद्भव आदि। इस तरह मार्क्सवादी इतिहास-लेखन ने नई संभावनाओं के द्वार खोल दिए।

संशोधनवादी इतिहासलेखन (Rivisionist Historiography) :

हाल में पुरातत्वविदों तथा लेखकों के नये समूह ने प्राचीन भारत के अध्ययन में प्रचलित कई अवधारणाओं को चुनौती दी है। इन विद्वानों ने नवीन पुरातात्विक उत्खनन एवं पुराने स्रोतों का दुबारा अध्ययन करके इन मान्यताओं का पुनर्मूल्यांकन करने का प्रयास किया। इन्हें सबसे अधिक आपत्ति इस बात पर है कि प्राचीन काल के अध्ययन में गंगा घाटी में होने वाले परिवर्तनों को अत्यधिक तरजीह दी गयी है तथा उसी के आधार पर सम्पूर्ण भारत के सन्दर्भ में निष्कर्ष निकालने का प्रयत्न किया गया है। इन विद्वानों में वी. डी. चट्टोपाध्याय, डी. के. चक्रवर्ती, बी. एन. आर. अल्चीन, नैयन ज्योति लाहिड़ी, उपिन्द्र सिंह आदि प्रमुख हैं। इसके अतिरिक्त इनका मानना है कि साहित्यिक साक्ष्य के समानान्तर पुरातात्विक साक्ष्य को विशेष महत्व देने की जरूरत है।

उपर्युक्त आधार पर इन विद्वानों ने द्वितीय नगरीकरण में लौह उपकरणों की भूमिका को चुनौती दी है। उसी तरह मौर्य साम्राज्य के स्वरूप के संन्दर्भ में इसका मानना है कि केन्द्रीयकरण की अवधारणा गंगा घाटी जैसे मुख्य क्षेत्र में लागू हो सकती है किन्तु इसे साम्राज्य के वृहद क्षेत्र मे लागू नहीं किया जा सकता। इसके अतिरिक्त वी. डी. चट्टोपाध्याय जैसे विद्वान ने गुप्तकाल के अन्त तथा उसके पश्चात् वाणिज्य-व्यापार, मुद्रा अर्थव्यवस्था एवं नगरीकरण के पतन की अवधारणा को अस्वीकार किया है। भारत के सन्दर्भ में सामंतवाद की अवधारणा को भी चुनौती दी गई। उसी प्रकार गुप्तोत्तर काल एवं पूर्वमध्यकाल को अवनति का काल न मानकर वह काल माना है जब एक तरफ कृषि अर्थव्यवस्था का व्यापक प्रसार हो रहा है वहीं क्षेत्रीय संस्कृतियाँ विकसित हो रही थीं।

अद्यतन दृष्टिकोण (Recent approach):

वर्तमान में इतिहास लेखन की परिधि बहुत व्यापक हो गयी है क्योंकि प्राचीन भारत के इतिहास के विश्लेषण में नये मुद्दे एवं आयाम जुड़ गये हैं। ये इस प्रकार हैं - प्रथम, एक प्रमुख मुद्दा **पर्यावरण का मुद्दा** है। पर्यावरण का मुद्दा भी अब इतिहास लेखन में शमिल हो गया है उदाहरण के लिए, कृषि के विकास को भी जलवायु एवं परिर्वतन संबधी परिर्वतनों से जोड़ा जाता है। उसी प्रकार हड़प्पा सभ्यता एवं प्रथम नगरीकरण के पतन की व्याख्या में पर्यावरणीय कारक को महत्व दिया गया है तथा द्वितीय नगरीकरण के पतन के विश्लेषण को भी पर्यावरणीय कारक से जोड़कर देखने का प्रयास किया गया है। द्वितीय, प्राचीन भारत के इतिहास के अध्ययन में **लैंगिक संबंध (Gender relation)** पर भी विशेष बल दिया जाने लगा है। पारिवारिक एवं सामाजिक संबंधों के संदर्भ में **'पितृसत्तावादी प्रकृति'** को विशेष रूप में रेखांकित किया जाने लगा है। लैंगिक अध्ययन का बल सामुदायिक जीवन एवं व्यक्तिगत जीवन के बीच के विभाजन को अस्वीकार करते हुए वर्ग विभाजन से लेकर राजनीतिक प्रभुत्व तक सभी महत्वपूर्ण विकास को लैंगिक विभाजन के संदर्भ में देखना है। तीसरा, प्राचीन भारत के इतिहास लेखन में एक नवीन प्रकृति के रूप में आयी है अब तक के **तिरस्कृत क्षेत्रों को अध्ययन की मुख्य धारा में शामिल किया गया है**। उदाहरण के लिए उत्तर-पूर्व क्षेत्र में होने वाले सामाजिक सांस्कृतिक परिवर्तन लगभग नजरअंदाज कर दिये गये थे। अब उनके अध्ययन पर विशेष बल दिया गया। उसी तरह प्राचीन भारत के इतिहास

NOTES

लेखन का गंगा घाटी केंद्रित दृष्टिकोण रहा था जबकि दक्षिण भारत एवं कुछ अन्य क्षेत्र तिरस्कृत रहे थे। अब उन क्षेत्रों के अध्ययन पर विशेष बल दिया गया। चतुर्थ, इतिहास के अध्ययन में **निर्धन वर्ग, श्रमिक वर्ग, जनजातीय, अछूत आदि समूह पर अपेक्षित काम नहीं हुआ था**। अब इन समूहों पर विशेष काम किये जा रहे हैं तथा काल विशेष के प्रशासनिक नियम एवं सामाजिक व्यवस्था का इन वर्गों पर पड़ने वाले प्रभाव का विशेष अध्ययन किया जा रहा है।

प्रश्न : प्राचीन भारत के इतिहास लेखन में राष्ट्रवादी एवं मार्क्सवादी दृष्टिकोणों के बीच अंतर के बिंदुओं को स्पष्ट कीजिए।

उत्तर: प्राचीन भारत के इतिहास लेखन में राष्ट्रवादी दृष्टिकोण एवं मार्क्सवादी दृष्टिकोण के बीच मौलिक अंतर रहा। इस अंतर का कारण वे परिस्थितियाँ हैं जिनके संदर्भ में इन दृष्टिकोणों का उद्भव हुआ।

राष्ट्रवादी इतिहासलेखन में घटनाक्रम को विशेष महत्व दिया जाता है तथा उनके वर्णन में विशेष रूचि ली जाती है। राष्ट्रवादी दृष्टिकोण व्यक्तित्व केंद्रित होता है अर्थात्, व्यक्तित्व के उद्घाटन में यह विशेष दिलचस्पी लेता है उदाहरण के लिए, राष्ट्रवादी विद्वानों ने समुद्रगुप्त, चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य, हर्षवर्धन आदि शासकों के व्यक्तित्व विश्लेषण पर अपने को केंद्रित किया। उसी प्रकार इन विद्वानों ने सिकंदर से लेकर मुहम्मद गोरी तक भारत पर होने वाले महत्वपूर्ण राजनीतिक आक्रमणों का विशिष्ट वर्णन करते हुए उनका समकालीन समाज एवं संस्कृति पर प्रभाव को दर्शाया। इसके अतिरिक्त राष्ट्रवादी दृष्टिकोण में विचारधारा की भूमिका को विशेष महत्व दिया गया है, उदाहरण के लिए, महाजनपद काल में होने वाले प्रमुख परिवर्तनों को बुद्ध एवं महावीर जैसे महान चिंतकों के विचारों के प्रभाव से जोड़कर देखने का प्रयास किया गया। अंत में राष्ट्रवादी इतिहास लेखन ने कला और संस्कृति के अंकन में विशेष रूचि दिखायी जबकि सामाजिक तथा आर्थिक सच्चाइयों को अपेक्षाकृत नजरअंदाज किया।

दूसरी तरफ, मार्क्सवादी इतिहासलेखन ने आर्थिक-भौतिक कारण को ही विशेष तरजीह दी तथा इतिहास में परिवर्तन की व्याख्या मूल ढांचा एवं ऊपरी ढांचा के परस्पर संबंधों के आधार पर करने का प्रयास किया। इसने आर्थिक ढांचे को मूल ढांचा माना जबकि राजनीतिक, सामाजिक ढ़ाँचे को उपरी ढांचा तथा यह स्थापित करने का प्रयत्न किया कि जब मूल ढांचे में परिवर्तन होता है तो ऊपरी ढांचे में परिवर्तन होता चलता है। इसी पद्धति को अपनाते हुए उसने इतिहास के अध्ययन को घटनाक्रम से विश्लेषण की ओर मोड़ दिया। उसने मानव व्यक्तित्व को तात्कालिक परिवर्तन से जोड़कर मूल्यांकन किया। उसी प्रकार, इसने विचारधारा को विभिन्न आर्थिक-भौतिक परिस्थितियों की उपज माना। इसलिए मार्क्सवादी इतिहास लेखन में महाजनपद काल में होने वाले प्रमुख परितर्वन को परिचालित करने वाले मौलिक कारण बुद्ध अथवा महावीर के विचार नहीं हैं अपितु नवीन कृषि अर्थव्यवस्था का प्रसार एवं द्वितीय नगरीकरण है। उसी तरह मार्क्सवादी इतिहासलेखन में कला एवं संस्कृति अपने आर्थिक परिवेश में स्वतंत्र नहीं है अपितु उसी की उपज है। कला एवं संस्कृति में अभिव्यक्त मूल्य (value) एवं दृष्टिकोण किसी खास वर्ग से संबद्ध होता है। यही वजह है कि मार्क्सवादी विद्वानों ने गुप्तकाल को स्वर्णयुग मानने से इंकार कर दिया क्योंकि उस काल की साहित्यिक एवं कलात्मक उपलब्धियां कुलीन वर्ग की चेतना की उपज थी जनसामान्य की चेतना की अभिव्यक्ति नहीं।

NOTES

इस प्रकार, मार्क्सवादी विद्वानों ने राष्ट्रवादी इतिहास लेखन की कुछ मौलिक मान्यताओं को खंडित कर दिया। हालांकि मार्क्सवादी इतिहासलेखन की अपनी सीमा रही है। इसने आर्थिक कारक पर कुछ ज्यादा ही बल दिया है तथा अन्य कारकों को अपेक्षाकृत नज़रअंदाज किया है। फिर भी इतिहास के विश्लेषण में मार्क्सवादी इतिहास लेखन का अहम योगदान रहा विशेषकर इसलिए कि इसने इतिहास के लेखन की पूरी पद्धति ही बदल दी।

प्रश्नः प्राचीन भारत की इतिहास लेखन के भावी संभावनाओं को उद्घाटित कीजिये।

उत्तरः जैसाकि हम जानते हैं कि इतिहास अतीत एवं वर्तमान के बीच निरंतर संवाद का नाम है। इस लिहाज से वर्तमान भारत के अध्ययन में प्राचीन भारत का इतिहास बहुत ही उपयोगी सिद्ध हो सकता है। आधुनिक भारत का एक ज्वलंत मुद्दा है भारतीय राष्ट्रवाद का विशिष्ट स्वरूप जिसे हम 'विविधता में एकता' के नाम से जानते हैं। दूसरे शब्दों में, भारतीय समाज एवं संस्कृति का स्वरूप बहुलवादी है किंतु हमें इन बातों की खोज प्राचीन भारत के इतिहास में ही करना होगा। प्राचीन भारत के इतिहस में ही वर्तमान भारतीय राष्ट्रवाद की जड़ खोजा जा सकता है। इसलिए प्राचीन भारत के इतिहास के अध्ययन में 'विविधता में एकता' की झलक प्राप्त करने का प्रयास किया जाना चाहिए।

फिर हमारी खोज अधिक प्रामाणिक हो इसके लिए अध्ययन स्रोतों का परिमार्जन एवं परिशोधन भी आवश्यक है। अब तक प्राचीन भारत के अध्ययन में साहित्यिक सामग्रियों को विशेष तरजीह दी गयी है जबकि पुरातात्विक सामग्रियों का आंशिक उपयोग ही हुआ है। इसलिए जरूरत है अध्ययन स्रोत के रूप में पुरातात्विक सामग्रियों का अधिकाधिक दोहन करने की। वर्तमान तकनीकी विकास को देखते हुए यह काम अधिक कठिन नहीं होगा। अध्ययन स्रोतों की बहुलता एवं प्रामाणिकता अध्ययन की परिधि को बढ़ाने में भी अपना योगदान दे सकती है। फिर उन्हें भी इतिहास लेखन में शामिल किया जा सकता है जिन्हें महत्वपूर्ण होने के बावजूद भी नजरअंदाज किया गया है यह है करूणा एवं प्रेम का इतिहास जो निश्चय ही मानव सभ्यता की अमूल्य धरोहर सिद्ध होगा।

□□□

THE STUDY

(An Institute for IAS)

Divyam Educom Pvt. Ltd.

Our Destiny in Our Hands

HISTORY

By Manikant Singh

THE STUDY under the expert guidance of MANIKANT SINGH has continued its journey on the path of success.....

अभ्यर्थियो! मुख्य परीक्षा में वैकल्पिक विषयों (Optional Subjects) में प्रश्नों की प्रवृत्ति यह दर्शाती है कि आपकी सफलता में भविष्य में वैकल्पिक विषय की निर्णायक भूमिका होगी। वैकल्पिक विषयों में अत्यधिक स्तरीय प्रश्न पूछे जाने लगे हैं। अतः वैकल्पिक विषय के लिए दीर्घकालीन तैयारी की जरूरत है। इसलिए अब आवश्यक है कि प्रारम्भिक परीक्षा से पूर्व वैकल्पिक विषय की तैयारी का अधिकांश भाग पूरा हो चुका हो क्योंकि प्रारम्भिक परीक्षा के बाद यह संभव नहीं हो सकेगा।

बदले हुए परिदृश्य में इतिहास एक अति महत्वपूर्ण वैकल्पिक विषय के रूप में उभरा है। इसके निम्नलिखित कारण हैं। प्रथम, इसका सामान्य अध्ययन में बहुत बड़ा योगदान (मुख्य परीक्षा प्रथम पत्र में 100 से 110 अंक तथा प्रारंभिक परीक्षा में 32 से 34 अंक) है। दूसरे, यह विषय सरल एवं सुग्राह्य है। अन्त में, इसमें "THE STUDY" जैसे विश्वसनीय संस्थान का सहयोग प्राप्त है।

हमारी रणनीति किस प्रकार अन्य से अलग है?

प्रचलित रणनीति

1. इतिहास के अध्ययन का अर्थ लगाया जाता है अधिक-से-अधिक सूचनाओं एवं तथ्यों का संग्रह करना।
2. अध्यापन में टॉपिक की क्रमबद्धता का प्रायः निर्वाह नहीं किया जाता (गुप्तकाल के अध्यापन के पश्चात् मौर्यकाल का अध्यापन, प्रथम विश्व युद्ध के पश्चात् जर्मनी के एकीकरण का अध्यापन आदि इस क्रमबद्धता का उल्लंघन है।)
3. अभ्यर्थियों को इतिहास के अध्ययन में प्रचलित विभिन्न दृष्टिकोणों (इतिहास लेखन) से अवगत नहीं कराया जाता। अतः किसी जटिल प्रश्न पर अपना झुकाव (Stand) स्पष्ट करना उनके लिए संभव नहीं हो पाता।
4. समय की बचत को ध्यान में रखकर कक्षा में भी तथ्यों को प्वाईंट्स में प्रदर्शित किया जाता किंतु इस कारण से अभ्यर्थियों की टॉपिक पर पूर्ण समझ विकसित नहीं हो पाता।
5. लेखन कला का विकास नहीं हो पाता।

हमारी रणनीति

1. हमारे लिए इतिहास तथ्य (Fact) कम एवं विश्लेषण (Analysis) अधिक है।
2. हम तीन चरणों (Stages) में विषय की तैयारी को पूर्ण करते हैं। प्रथम चरण में हमारा बल विषय में छात्रों की दिलचस्पी एवं मौलिक समझ विकसित करने पर होता। इसलिए हम उन्हें निरन्तरता एवं परिवर्तन (Continuity and Changes) का ज्ञान देते।
3. द्वितीय चरण में हमारा बल इतिहास लेखन के ज्ञान (Knowledge of Historiography) पर होता है ताकि अभ्यर्थी स्तरीय प्रश्नों (Standard Questions) पर अपना

The most trusted name in History brings you

ONLINE CLASSES

(Hindi/English Medium)

By Manikant Singh

Features:-
- Online classes
- Study Material &Latest updates
- Answer writing practice and Tests
- Test Series

For videos visit www.thestudyias.net

Correspondence Course

(Hindi/English Med.)

-Complete Study Material
-Personal guidance
-Answer writing practice and Tests

Special Batch *for* NET/JRF

210, Virat Bhawan, IInd Floor, Near Post Office, Dr. Mukherjee Nagar, Delhi-9
www.thestudyias.net :: Email: thestudyias@gmail.com /thestudyias
Ph.: 011-27653672, 42870015, 27652263, 9999278966